इकाई 8 पदमावत में लोक परंपरा और लोक जीवन

इकाई की रूपरेखा

8.0 उद्देश्य
8.1 प्रस्तावना
8.2 भारतीय काव्य परंपरा और फारसी काव्य परंपरा
8.3 हिंदी प्रेमाख्यान
8.4 पदमावत में प्रेम कथा
8.5 पदमावत की प्रबंधात्मकता
8.6 पदमावत में लोकतत्व
8.7 जायसी की भाषा
8.8 सारांश
8.9 अभ्यास/प्रश्न

8.0 उद्देश्य

इस इकाई का अध्ययन करने के बाद आप :

- भारतीय काव्य परंपरा और फारसी काव्य परंपरा से परिचित हो सकेंगे,
- लोकगाथा के रूप में **पदमावत** का अध्ययन करेंगे और साथ ही इसकी प्रबंधात्मकता के विषय में ज्ञान प्राप्त कर सकेंगे,
- **पदमावत** में चित्रित लोकजीवन से परिचित हो सकेंगे, और
- लोककवि के रूप में जायसी और उनकी भाषा का अध्ययन कर सकेंगे।

8.1 प्रस्तावना

पिछली इकाई में आपने जायसी के बारे में बहुत कुछ आवश्यक जानकारी प्राप्त की। मलिक मुहम्मद जायसी के बारे में जब कि यह स्पष्ट हो चुका है कि वे सूफी कवि नहीं, बल्कि सिर्फ कवि हैं और उनका **पदमावत** लौकिक प्रेम काव्य है, अब यह जान लेना आवश्यक है कि जायसी ने **पदमावत** में कितना तत्व भारतीय काव्य परंपरा से ग्रहण किया है और कितना फारसी काव्य परंपरा का। इन दोनों के समन्वय से **पदमावत** का कौन सा रूप सामने आता है। क्या जायसी ने पहली बार भारतीय और फारसी काव्य परंपराओं का समन्वय किया है। आप देखेंगे कि जायसी से पहले भी इन दोनों काव्य-परंपराओं के समन्वय का प्रयास किया जा चुका है। जिन कवियों ने इन दोनों काव्य परंपराओं का समन्वय किया उनमें अमीर खुसरो, असाइत और मुल्ला दाउद प्रमुख हैं।

जायसी ने एक प्रचलित लोककथा और ऐतिहासिक कथा के ताने-बाने से **पदमावत** का कथापट बुना है। इसमें इतिहास कम है, लोक कथा ज्यादा। लोकगाथा के आधार पर रचे गए इस प्रबंध काव्य में लोक जीवन कितना है, इसकी जानकारी आवश्यक है। लोक गाथा के रूप में **पदमावत** की जाँच-पड़ताल ज़रूरी है, क्योंकि लोक गाथा के अनेक तत्व हैं, इसीलिए **पदमावत** एक साहित्यिक कृति होते हुए भी लोककाव्य की विशेषताओं से अलग नहीं हो पाया है। एक प्रेमाख्यान के रूप में **पदमावत** की सफलता का यही रहस्य है।

लोकगाथा के आधार पर **पदमावत** की विवेचना करते हुए जायसी के लोक कवि व्यक्तित्व का भी विश्लेषण करने की कोशिश की ज़ाएगी। इसी सिलसिले में **पदमावत** की भाषा पर भी विचार किया जाएगा। एक साहित्यिक कृति के लिए अवधी का प्रयोग किस सीमा तक ठीक है, इसको जानना अति आवश्यक है।

जायसी कृत **पदमावत** एक श्रेष्ठ काव्य कृति है, इसलिए इस काव्य कृति में भारतीय और फारसी काव्य परंपरा के साथ उसके लोकथात्मक रूप का समग्र विवेचन इस इकाई का मुख्य उद्देश्य है।

8.2 भारतीय काव्य परंपरा और फारसी काव्य परंपरा

प्राय: सभी देशों में प्रेम और शृंगार को आधार बना कर जितनी कविताएं लिखी गई हैं उतनी किसी दूसरे विषय पर नहीं। इसका कारण यह है कि प्रेम एक शाश्वत तत्व है जिसके आधार पर स्वस्थ सामाजिकता का निर्माण होता है। मनुष्य ही नहीं, संपूर्ण सृष्टि के अंदर एक राग व्याप्त है जिससे सृष्टि हमेशा सुंदर और सजीव बनी रहती है। इसीलिए प्रेम को जीवन कहा गया है और प्रेम से ही सारे जीवन मूल्य विकसित हुए हैं। साहित्य इसी जीवन मूल्य अर्थात् प्रेम को बचाए रखने की कोशिश करता है।

भारतीय कविता में प्रेम को सर्वोच्च स्थान प्राप्त है। भौतिक जीवन ही नहीं, बल्कि आध्यात्मिक क्षेत्र में भी प्रेम को विशेष स्थान दिया गया है। भक्ति के क्षेत्र में मधुरा भक्ति इसका सबसे सुंदर उदाहरण है। सूफी कवियों की साधना का आधार ही प्रेम या रति है। उन्होंने मजाजी प्रेम को हकीकी प्रेम में बदल दिया। किंतु हिंदी साहित्य में प्रेम के इस नए रूप से पहले जिस विशुद्ध लौकिक प्रेम की प्रतिष्ठा की गई वह अत्यंत उदात्त है। चाहे दुष्यंत-शकुंतला का प्रेम हो चाहे नल-दमयन्ती का, उषा-अनिरुद्ध का प्रेम हो चाहे माधवानल-कामकंदला का - सभी में प्रेम का सरस, किंतु प्रांजल रूप देखने को मिलता है। संस्कृत में कालिदास से लेकर प्राकृत के पादलिप्त सूरी और अपभ्रंश के धनपाल तथा अद्दहमाण (अब्दुर्रहमान) तक अनेक कवियों ने विशुद्ध प्रेमकथाएं लिखीं और प्रेम को अमरता प्रदान की। यह अलग बात है कि प्राकृत की प्रेम कथाएं जैनियों द्वारा धर्म प्रचार के लिए लिखी गईं। वे प्रेमाख्यान की अपेक्षा चरित काव्य अधिक हैं। लेकिन यहाँ यह बताना जरूरी है कि हिंदी के सूफी कवियों ने अपने पूर्व के इन्हीं प्रेमपरक काव्यों के आधार पर अपने प्रेमाख्यानक ग्रंथों की रचना की। अपवाद को छोड़ दिया जाए तो सूफी और असूफी प्रेमाख्यान इन्हीं प्रेम कथाओं को लेकर या कुछ भारतीय लोककथाओं को लेकर लिखे गए। सूफी प्रेमाख्यान से पहले के कुछ प्रसिद्ध प्रेमपरक काव्य इस प्रकार हैं - अभिज्ञान शाकुंतलम् (कालिदास), नैषधीय चरितम् (श्रीहर्ष), माधवानल कामकंदला चरित्र (कुशलाभ), तरंगवई (पादलिप्त सूरी), लीलावई (कोऊहल), मलय सुंदरी (अज्ञात), भविसयत्तकहा (धनपाल), णायकुमार चरिउ (पुष्पदंत), सुदंसण चरिउ (नयनंदी), करकंडु चरिउ (मुनि कनकामर), उपमसिरी चरिउ (धाहिल), संदेशरासक (अद्दहमाण), नेमिनाथ चउपई (विनयचंद्र सूरि) आदि।

सूफी मत के उद्भव और विकसित होकर एक पुष्ट सम्प्रदाय का रूप ले लेने के बाद उसमें अनेक मसनवियां लिखी गईं। इन मसनवियों को प्रेमाख्यान कहा जाता है। ये मसनवियाँ अरब-फारस की प्रसिद्ध लोककथाओं पर आधारित थीं। इन्हीं कथाओं में से कुछ कथाओं में निज़ामी ने सूफी दर्शन को समाहित किया। अमीर खुसरो पर निज़ामी का बहुत प्रभाव था। उनसे प्रभावित होकर खुसरो ने पाँच मसनवियाँ लिखीं। इसी तरह फारसी के सूफी कवि जामी ने निज़ामी और खुसरो से प्रभावित होकर पाँच मसनवियों की रचना की। इस तरह यह साफ पता चलता है कि हिंदी के सूफी प्रेमाख्यान फारसी मसनवियों से प्रेरित होकर लिखे गए।

फारसी की सभी मसनवियाँ वहाँ प्रचलित प्रेम कथाओं के आधार पर लिखी गईं और उनके द्वारा सूफी मत का प्रतिपादन किया गया। फारसी के सभी सूफी कवियों ने विशुद्ध प्रेम पर बल देते हुए स्त्री-पुरुष के प्रेम को ईश्वरीय प्रेम की तरह पवित्र माना। मौ. रूम ने लौकिक प्रेम को नश्वर मानते हुए अलौकिक प्रेम की बात की। इस तरह उन्होंने प्रेम को अमरत्व प्रदान किया। इसी तरह फारसी के प्राय: सभी सूफी कवियों ने प्रेम की अमरता, जीवन की नश्वरता, त्याग, आत्मसमर्पण आदि पर जोर दिया। प्रेम साधना में वासना को निषिद्ध माना गया। अर्थात् उनका प्रेम अशरीरी था।

फारसी के सूफी प्रेमाख्यानों में नायक के प्रेम में अधिक तड़प और वेग दिखाई पड़ता है। नायिका का विवाह प्रेमी से न होकर अन्य व्यक्ति से होता है। प्रेमी का जीवन अत्यन्त कष्टप्रद और आदर्शवादी होता है। फारसी के सूफी प्रेमाख्याओं में संभोग का चित्रण नहीं किया गया है, लेकिन कहीं-कहीं उनमें भी मांसल प्रेम दिखाई पड़ता है।

8.3 हिंदी प्रेमाख्यान

अभी तक आपने फारसी के सूफी काव्य की सामान्य रूपरेखा के बारे में जानकारी प्राप्त की। अब आपको हिंदी के सूफी प्रेमाख्याओं के बारे में जान लेना आवश्यक है।

पहले कहा जा चुका है कि अमीर खुसरो पहले भारतीय कवि हैं जिन्होंने निज़ामी से प्रेरणा ग्रहण कर प्रेमाख्यान लिखे और सूफी मत का प्रतिपादन किया। अमीर खुसरो के 50 वर्ष बाद हिंदी में सूफी काव्य की रचना प्रारंभ हुई। अब तक प्राप्त जानकारी के अनुसार असाइत कृत **हंसावली** (1370ई.) ही हिंदी का पहला सूफी काव्य है। इसके बाद मुल्ला दाउद ने **चन्दायन** (1379) नामक सूफी काव्य की रचना की। दामोदर कवि कृत लखमसेन **पद्मावती** कथा (1459ई.), कुतुबन कृत **मृगावती** (1503 ई.), गणपति कृत **माधवानल कामकन्दला** (1527ई.), जायसी कृत **पदमावत** (1540ई.), मंझन कृत **मधुमालती** (1545ई.), उसमान कृत **चित्रावली** (1613ई.) आदि हिंदी के प्रमुख प्रेमाख्यानक काव्य हैं। हिंदी प्रदेश के आलावा दक्षिण भारत में भी अनेक प्रेमाख्यानक काव्य लिखे गए जिनमें मसनवी **कदमराव पदमराव** (14 ई.), मुल्ला वजही कृत **कुतुब मुश्तरी** (1610ई.), नुसरती कृत **गुलशने इश्क़** (1658ई.), इब्न निशाती कृत **फूलबन** (1665ई.) आदि प्रमुख हैं।

भारतीय काव्य की प्राय: सभी आरंभिक प्रेम कथाएं वैदिक और पौराणिक प्रेम कथाओं के आधार पर लिखी गई हैं। संस्कृत साहित्य के बाद पालि, प्राकृत और अपभ्रंश की प्रेमकथाओं का आधार प्राय: ऐतिहासिक और काल्पनिक है। सूफियों से पहले जैनियों ने भारत की प्रचलित प्रेमकथाओं के आधार पर चरित काव्य लिखे और उनके द्वारा जैन धर्म का प्रचार किया। इसी तरह सूफी कवियों ने भी लोक प्रचलित प्रेमकथाओं या ऐतिहासिक प्रेमकथाओं के आधार पर सूफी मत का प्रतिपादन किया। इस तरह संस्कृत से लेकर पालि, प्राकृत और अपभ्रंश की प्रेमकथाओं में आदर्शवादी प्रेम का चित्रण किया गया है तथा प्रेम को उदात्त बनाने की कोशिश की गई है। हिंदी के असूफी प्रेमाख्यानों में इसी भारतीय परंपरा का अनुकरण किया गया है। तात्पर्य यह है कि भारतीय साहित्य में नायिकाओं को प्राय: कोमल, संवेदनशील, साहिष्णु और पतिव्रता के रूप में चित्रित किया गया है, लेकिन फारसी की प्रेमकथाओं की नायिकाओं की अपेक्षा नायकों को अधिक प्रेमी, सहिष्णु, संवेदनशील और एकनिष्ठ चित्रित किया गया है। लैला-मजनूं मे मजनूं का एकनिष्ठ प्रेम लैला के प्रति है और शीरीं-फरहाद में फरहाद का एकनिष्ठ प्रेम शीरीं के प्रति है। वास्तव में फारसी के सूफी प्रेमाख्याओं के नायकों के लिए उनकी प्रेमिकाएं उनकी प्रेरणा हैं, साधन और साध्य हैं।

भारतीय सूफी प्रेमाख्यानों में शृंगार के दोनों पक्षों -संयोग और वियोग का चित्रण किया गया है, किंतु फारसी के सूफी प्रेमाख्यानों में केवल वियोग का चित्रण किया गया है।

तात्पर्य यह है कि भारतीय और फारसी काव्य में प्रचुर मात्रा में प्रेमाख्यान लिखे गए, किंतु दोनों में अंतर है। हिंदी के सूफी कवियों ने फारसी सूफी काव्य के कुछ आदर्शों को जरूर अपनाया, किंतु हिंदी के प्राय: सभी सूफी कवियों ने कथावस्तु का चयन भारतीय प्रेम कथाओं से ही किया। सामान्यतया देखा जाए तो फारसी की मसनवी शैली को छोड़कर हिंदी के सूफी प्रेमाख्यान विशुद्ध भारतीय हैं। यहाँ तक कि सूफी दर्शन की 'फना' की अवधारणा ही भारतीय है। आचार्य रामचन्द्र शुक्ल के अनुसार 'फन' बौद्धों के निर्वाण की प्रतिध्वनि थी। इसीलिए शुक्ल जी ने सूफी मत की भक्ति और भारतीय नवधा भक्ति को समान माना है। उस पर भारतीय वेदान्त का भी प्रभाव पड़ा। मंसूर हल्लाज का अनलहक़ भारतीय वेदान्त का 'अहं ब्रह्मास्मि' ही है।

8.4 पदमावत में प्रेमकथा

पिछली इकाई में जायसी के कवि व्यक्तित्व की चर्चा के दौरान पदमावत के लोक कथात्मक तत्वों की ओर संकेत किया जा चुका है। पदमावत का नागमती वियोग खंड तो पूरी तरह लोककाव्य बारहमासा की तर्ज पर रचा गया है। आपके लिए यह जान लेना जरुरी है कि प्रबंध काव्य में बारहमासा का प्रयोग पूरी तरह भारतीय है। फारसी के सूफी प्रेमाख्यानों में बारहमासे का प्रयोग नहीं दिखाई देता।

भारत में लोकगाथाओं का अभाव तो नहीं है, किंतु जिस तरह अरब-फारस में लैला-मजनूं, शीरीं-फरहाद और यूसुफ-जुलेखा जैसी कथाएं दन्तकथाएं बन गईं उस रूप में वेदों और पुराणों में वर्णित प्रेम कथाएं दन्तकथा नहीं बन सकीं। लोक में प्रचलित न होने के कारण उनका विस्तार जन सामान्य तक नहीं हुआ, लेकिन उन कथाओं को आधार बनाकर संस्कृत, पालि, प्राकृत और अपभ्रंश में अनेक काव्य लिखे गए। दुष्यंत-शकुंतला, उषा-अनिरुद्ध, नल-दमयन्ती, माधवानल-कामकंदला ऐसी ही कथाएं हैं। लेकिन ऐसा भी नहीं है कि भारत में लोकगाथाएं हैं ही नहीं। तोता-मैना और सारंगा-सदाबृज ऐसी लोककथाएं हैं जो भारतीय जनमानस में रची-बसी हैं, लेकिन इनको आधार बनाकर किसी उत्कृष्ट काव्य की रचना नहीं की गई।

कहने को तो भारत में **हितोपदेश, कथा सरित्सागर, सिंहासन बत्तीसी** और **बैताल पच्चीसी** जैसे अनेक ग्रंथ हैं जिनमें रोचक और अतिरंजक कथाओं की भरमार है, किंतु आचार्य रामचंद्र शुक्ल के अनुसार इतिवृत्त होने के कारण इन्हें काव्य नहीं कहा जाता। ये कहानियाँ भी मनोरंजन करती हैं और कुतूहल, जिज्ञासा और उत्कंठा पैदा करती हैं, किंतु इनसे न तो भावोद्रेक होता है और ~~न ही रसोद्रेक~~। शुक्ल जी ने यह भी लिखा है कि इसके बावजूद कुछ ऐसी भी कहानियाँ जनसाधारण में प्रचलित होती हैं जिनके बीच-बीच में भावोद्रेक करने वाली दशाएं पड़ती चलती हैं। इन्हें हम रसात्मक कहानियाँ कह सकते हैं। इनमें भावुकता का अंश बहुत कुछ होता है और ये अनपढ़ जनता के बीच प्रबंध काव्य का ही काम देती हैं।

यहाँ एक रोचक तथ्य का उल्लेख करना जरूरी लगता है। ऊपर कहा जा चुका है कि **हितोपदेश, सिंहासन बत्तीसी** और **बैताल पच्चीसी** आदि को काव्य की श्रेणी में नहीं रखा जाता, किंतु हिंदी के पहले प्रेमाख्यानक ग्रंथ **हंसावली** की कथा का आधार विक्रम एवं बैताल की कथा ही है। असाइत ने स्वयं इसका उल्लेख हंसावली में किया है-

बावन बीर कथा रस लीउ। ऐह पवाडु असाइत कहिउ।

लेकिन इस प्रेमाख्यान की कथा पूरी तरह लोक गाथात्मक है, क्योंकि इसमें लोकगाथा के सभी प्रमुख तत्व मौजूद हैं जिनसे रसोद्रेक नहीं होता, केवल उत्कंठा और कुतूहल पैदा होता है। लेकिन जायसी से पूर्व ही कल्लोल नामक कवि ने राजस्थानी प्रेमाख्यान के आधार पर **ढोला मारू रा दूहा** (1393ई.) की रचना की थी जो लोकगाथा के तत्वों से परिपूर्ण है। जायसी के **पदमावत** पर इसका प्रभाव पड़ा होगा, ऐसा अनुमान लगाना गलत न होगा।

हिंदी के इन दो प्रेमाख्यानों से पहले अपभ्रंश में **संदेशरासक** जैसे विशुद्ध लोकगात्थात्मक काव्य की रचना हो चुकी थी। इस प्रेमाख्यान में प्रेम का जितना उदात्त रूप दिखायी पड़ता है वह अन्यत्र दुर्लभ है। हिंदी के कवियों पर अद्दहमाण की इस लौकिक प्रेम पर आधारित रचना का बहुत प्रभाव परिलक्षित होता है। लेकिन **संदेशरासक** में संस्कृत के दूत काव्यों और लोकपरंपरा का सामंजस्य भी दिखाई पड़ता है। इसी तरह **बीसलदेवरासो** में भी दोनों परम्पराओं का समावेश किया गया है।

अभी तक आपने सूफी प्रेमाख्यानों से पूर्व के लोकगाथात्मक काव्यों के बारे में जानकारी प्राप्त की। अब **पदमावत** के लोकगाथात्मक रूप पर विचार कर लेना आवश्यक है, क्योंकि इससे न केवल **पदमावत** के स्वरूप निर्धारण में मदद मिलेगी, बल्कि जायसी के कवि व्यक्तित्व को परखने में भी सहायता मिलेगी।

पिछली इकाई में कहा जा चुका है कि **पदमावत** मानवीय प्रेम, करुणा, उत्साह और उसकी ट्रेजेडी को निरूपित करने वाला काव्य है। अपनी मूल प्रकृति में **पदमावत** को एक त्रासदी मानने वाले आलोचक विजय देव नारायण साही के अनुसार जायसी की चिंता का मुख्य ध्येय मनुष्य है। यह प्रेम और युद्ध की कविता है। इस कथा को इतिहास मानना भूल होगी। वास्तव में **पदमावत** न तो किसी मत को प्रतिपादित करने वाला काव्य है और न ही उसका कवि किसी संप्रदाय का प्रचारक। उसने इतिहास को लोकगाथा से मिलाकर अपनी कल्पना से एक ऐसी कथा का सृजन किया जिसे ऐतिहासिक मान लिया गया। ध्यातव्य है कि जायसी से पूर्व नारायण दास ने **छिताई वार्ता** लिखी थी जिसमें छिताई-रामदेव और अलाउद्दीन आदि ऐतिहासिक पात्रों की ऐतिहासिकता असंदिग्ध है। **छिताई वार्ता** का अलाउद्दीन छिताई का अपहरण कर लेता है। इसी तरह **पदमावत** का अलाउद्दीन भी पदमावती को प्राप्त करने के लिए

अनेक प्रयास करता है, किंतु अंतत: उसे कुछ हासिल नहीं होता। दरअसल जायसी ने अपने प्रेमाख्यान के लिए रतनसेन नामक ऐतिहासिक पात्र को ले लिया और बाकी कथा अपनी कल्पना से जोड़ ली। यह जायसी की कल्पना का ही कमाल है कि उन्होंने एक ऐसी कथा को बुना जिसे लोग इतिहास मानने के लिए विवश हो गए।

अधिकांश आलोचक **पदमावत** को दो भागों में विभाजित करके उसका मूल्यांकन करते हैं- रत्नसेन की सिंहलद्वीप यात्रा से लेकर पद्मिनी के साथ पुन: चित्तौड़ लौटने तक पूर्वार्द्ध और राघवचेतन के निकाले जाने से लेकर पदमावती के सती होने तक उत्तरार्द्ध। रतनसेन का हीरामन तोते से पदमावती के रूप सौंदर्य को सुनकर योगी के वेश में सोलह हजार योगियों के साथ सिंहलद्वीप जाना, पदमावती को प्राप्त करने के लिए अनेक प्रकार के कष्टों को सहन कर वापसी में समुद्र का कोपभाजन बनकर बिछुड़ना आदि कथाएं परी-कथाओं जैसी हैं। पदमावती की पूर्वार्द्ध की कथा बिल्कुल लोकगाथाओं जैसी है। निस्संदेह यह कथा लोक में प्रचलित रही होगी। यहाँ यह जान लेना आवश्यक हैं कि ऐतिहासिक घटनाएं भी लोकरुचि में रंगकर लोकगाथात्मक हो जाती हैं। उनमें चमत्कार तथा अतिमानवीय घटनाएं जुड़ जाती हैं। स्वयं कबीर इसके शिकार हो चुके हैं। लोक में कबीर और गोरखनाथ को लेकर ऐसी न जाने कितनी किंवदन्तियाँ प्रचलित हैं जो बिल्कुल झूठी हैं। जायसी ने लोकरुचि को पर्याप्त सम्मान दिया है और लोक प्रचलित कथा को रतनसेन की ऐतिहासिक कथा में इस तरह मिला दिया कि उस कथा में लोककथा से गायब हो गई और वह एक कल्पित इतिहास बन गई जिसे बाद में आलोचकों ने वास्तविक इतिहास मानने की भूल कर डाली। वस्तुतः यह मान लेना ठीक होगा कि **पदमावत** लोकगाथा के आधार पर रचा गया जायसी का लौकिक काव्य है जिसमें मनुष्य प्रेम, उत्साह, घृणा और संभावनाओं के साथ संघर्ष करता है, हारता है, जीतता है। किसी को यहाँ मोती मिलता है तो किसी को घोंघा और सेवार (देखिए मानसरोवर खंड) जिसे अपनी अभिलषित वस्तु नहीं मिलती वह एक मुट्ठी धूल उठा कर यह कहने पर मजबूर हो जाता है कि यह दुनिया झूठी है -

छार उठाइ लीन्ह एक मूठी। दीन्ह उड़ाइ, पिरथिमी झूठी।।

हिंदी के सूफी काव्यों में अनेक कथानक रूढ़ियों और प्रतीकों का प्रयोग हुआ है। ये कथानक रूढ़ियाँ प्राय: एक जैसी हैं। प्रतीकों की योजना सिर्फ मत प्रतिपादन के लिए की गयी है। **पदमावत** में इस तरह का कोई प्रतीक नहीं है जो तसव्वुफ का प्रतिपादन कर सके हाँ, **पदमावत** में कथानक रूढ़ियाँ जरूर हैं। मानवेतर प्राणी के रूप में हीरामन का आदमी की तरह बातें करना, महेश-पार्वती का रत्नसेन की परीक्षा लेना फिर उसे सिद्धि गुटका और रतनसेन को सूली देने के समय महेश-पार्वती का नट-नटिनी का रूप धारण कर वहाँ पहुँचना, जोगियों का सिंघल द्वीप के सैनिकों से युद्ध, हनुमान द्वारा जोगियों की सहायता, शिव का युद्ध में जाना, रतनसेन का पदमावती से तथा सोलह हजार योगियों का पद्मिनी स्त्रियों से विवाह, समुद्र का नायक के रूप में रतनसेन से भिक्षा मांगना, रतनसेन द्वारा तिरस्कृत समुद्र का भीषण तूफान ला देना, रतनसेन-पदमावती का अलग-अलग दिशाओं में बह जाना, समुद्र की कन्या लक्ष्मी द्वारा दोनों को मिलाने का वचन देना और उनके पुनर्मिलन के बाद समुद्र द्वारा रतनसेन को पाँच अनमोल पदार्थ देना आदि घटनाएं लोक गाथाओं जैसी जिज्ञासा और कुतूहल उत्पन्न करने वाली अतिरंजनापूर्ण और अविश्वसनीय हैं। इसमें प्रेमकथाओं के वे सभी तत्व मौजूद हैं जो प्रेमकथा के लिए अनिवार्य होते हैं। इस तरह **पदमावत** का पूर्व भाग पूरी तरह लोक गाथात्मक है, किंतु **पदमावत** लोकगाथा नहीं हैं, एक काव्य है, जिसमें कवि की एक विशेष जीवन-दृष्टि है। यही जीवन-दृष्टि इसे लोक गाथा होने से बचाती है। **पदमावत** के लोक गाथात्मक रूप को समझाने के लिए उसके कुछ महत्वपूर्ण अंशों को देखना जरूरी है। सबसे पहले नागमती वियोग वर्णन को लिया जा सकता है।

नागमती वियोग वर्णन बारहमासे की तर्ज पर लिखा गया है, यह पहले ही कहा जा चुका है। यहाँ यह बता देना आवश्यक प्रतीत होता है कि लोककाव्य विधा बारहमासा का साहित्य में सर्वप्रथम प्रयोग अपभ्रंश काव्य **नेमिनाथचउपई** में किया गया। इसके बाद **बीसलदेवरासो** में बारहमासा का प्रयोग किया गया। इससे ज़ाहिर होता है कि सूफी कवियों में पहले ही साहित्य से लोककाव्य विधा का प्रवेश हो चुका था। यह इतना प्रभावशाली था कि जायसी इसे छोड़ नहीं सके और **पदमावत** में उन्होंने उसके द्वारा नागमती का जितना मार्मिक चित्रण किया उतना कोई कवि नहीं कर पाया।

जायसी प्रेम के कवि हैं। उन्होंने इस प्रेम की विशद व्यंजना **पदमावत** में की है। **पदमावत** का यह प्रेम त्रिआयामी है। एक तरफ नागमती है और दूसरी तरफ पदमावती। इन दोनों के केंद्र में रतनसेन है। लेकिन नागमती का चरित्र एक साधारण औरत और पत्नी का चरित्र है तथा पदमावती का चरित्र एक

प्रेमिका का। प्रेमिका होकर और अपने प्रेमी से वियुक्त होकर भी पदमावती में वह तड़प नहीं है जो एक साधारण औरत के रूप में नागमती में विद्यमान है। नागमती का यह चरित्र लोकगाथाओं की गृहस्थ स्त्रियों जैसा है। संभवत: इसीलिए जायसी का कवि नागमती की भावदशा में ज्यादा रमा है और इसीलिए जायसी नागमती के वियोग वर्णन को विशेष रूप से चित्रित करने में सफल हुए हैं।

विरह दशा में प्रेम अपनी संपूर्णता में परिलक्षित होता है। प्रेम है तो वियोग भी होगा। प्रेम में वियोग और रस दोनों है जैसे मोम के छत्ते में शहद और बर्रे दोनो रहते हैं -

पेमहिं मांह बिरह औ रसा। मैन के घर मधु अंब्रित बसा।

जायसी का प्रेम विशुद्ध भारतीय है। पति से वियुक्त होने पर नागमती पटरानी से एक सामान्य स्त्री में बदल जाती है जिसकी मुख्य चिंताओं में छोटी-छोटी बातें शामिल हैं, जैसे बरसात आ गयी, पति नहीं है। घर की मरम्मत कौन करेगा, उसके पास नए सिर से घर बनाने के सामान भी नहीं हैं -

कोरौं कहाँ ठाढ नव साजा? तुम बिनु कंत न छाजनि छाजा।

नागमती के वियोग वर्णन के वक्त जायसी की मनोदशा एक लोक कवि जैसी हो गयी है और नागमती खंड लोककाव्य। नागमती विरह की आग में तपकर अपने सारे गौरव-गर्व को भूल जाती है और अपनी सौत के पास पक्षी से भिजवाए संदेशों में कहती है कि यद्यपि मैं रत्नसेन की ब्याहता हूँ। किंतु मुझे भोग से कोई वास्ता नहीं है, मैं तो उन्हें अपनी आंखों से देखना चाहती हूँ -

पदमावति सौ कहेहु बिहंगम। कंत लोभाइ रही करि संगम।।
तोहि चैन सुख मिलै सरीरां। मो कहँ दिए दुंद दुख पूरा।।
हमहुँ बिआही सँग ओहि पीऊ। आपुहिं पाइ, जानु पर जीऊ।।
मोहिं भोग सौं काज न बारी। सौंह दिस्टि कै चाहनहारी।।

नागमती की यह सहृदयता और त्याग की पूरी अवधारणा लोक साहित्य की है। जायसी ने इसे लोकपरंपरा रो ही ग्रहण किया है। वास्तव में नागमती वियोग खंड की पूरी संरचना लोकगाथाओं से प्रेरित है।

पदमावत के नागमती वियोग खंड के अलावा जहाँ जहाँ लोककथात्मक आधार ग्रहण किया गया है उनमें पदमावती सुआ भेंट खंड भी है। एक लंबे समय के बाद हीरामन पदमावती से मिलता है, पदमावती उसे गले से लगा लेती है, किंतु उसकी आंखों से आंसू गिरने लगते हैं-

आगि उठे दुख हिये गँभीरू। नैनहिं आइ चुवा होइ नीरू।।

एक राजकुमारी का एक तोते से इतना प्रेम और उससे मिलने की इतनी खुशी बिलकुल लोककथाओं और दन्तकथाओं जैसी है। इस तरह जायसी ने मानव प्रेम का विस्तार किया है। इसी तरह पदमावती का विश्वनाथ पूजा के लिए ब्राह्मण, अगरवार, बैस, चंदेल, चौहान, सोनार, कलवार, बनियाइन, कयथिन, पटइन और बरइन आदि स्त्रियों के साथ जाना भी लोकपरंपरा से गृहीत है। यह प्रेम की सामाजिकता है। लेकिन लोकपरंपरा की पूरी झलक वहाँ दिखाई पड़ती है जहाँ पदमा•ती एक सामान्य स्त्री की तरह अपनी पीड़ा व्यक्त करते हुए कहती है कि-

और सहेली सबै बियाहीं। मो कहँ देव कतहुँ बर नाहीं।।

पदमावती यहाँ एक राजकुमारी नहीं, बल्कि एक सामान्य घर की लड़की हो गयी है जो यह मन्नत मांगती है कि अगर मेरे योग्य वर से मेरी शादी हो जाएगी तो मैं आपकी पूजा करूंगी -

बर सौं जोग मोहि मेरवहु, कलस जाति हौं मानि।
जेहि दिन हींछा पूजै, बेगि चढ़ावहुँ आनि।।

पदमावती का एक राजकुमारी की अपेक्षा एक सामान्य स्त्री के रूप में यहाँ जितना स्वाभाविक चित्रण हुआ है वह अन्यत्र दुर्लभ है।

तात्पर्य यह है कि **पदमावत** की पूरी संरचना लोकगाथात्मक है, इसीलिए इसमें इतनी सजीवता, मार्मिकता और सरसता है।

8.5 पदमावत की प्रबंधात्मकता

पदमावत के लोककथात्मक रूप की जानकारी के बाद इसकी प्रबंधात्मकता पर भी विचार कर लेना आवश्यक है।

आचार्य रामचंद्र शुक्ल ने जायसी ग्रंथावली की भूमिका में जायसी से पहले के हिंदी प्रेमाख्यानों- **मृगावती, मधुमालती, मधुमालती कथा, मुग्धावती, प्रेमावती, चित्रावली** और **इंद्रावत** की रचना को भारतीय चरित काव्यों की सर्गबद्ध शैली पर न मानकर फारसी की मसनवी शैली पर माना है जिसमें कथा सर्गों में विस्तार के हिसाब से विभक्त नहीं होती, बराबर चली चलती है, केवल स्थान स्थान पर घटनाओं या प्रसंगों का उल्लेख शीर्षक के रूप में रहता है। उसमें पहले ईश स्तुति, पैगम्बर की वंदना और उस समय के राजा की प्रशंसा होनी चाहिए। ये बातें **पदमावत, इंद्रावत, मृगावती** इत्यादि सब में पाई जाती हैं। यही नहीं, जायसी की प्रबंध कल्पना पर विचार करते हुए शुक्ल जी ने **पदमावत** को दो भागों में बाँटा है - इतिवृत्तात्मक और रसात्मक। घटना या सामान्य वर्णन इतिवृत्त कहा जाता है और घटना का मनोदशाओं का भावपूर्ण चित्रण रसात्मक। **पदमावत** में ये दोनों विशेषताएँ दिखायी देती हैं। शुक्ल जी की भी यही मान्यता है कि रसात्मकता के संचार के लिए प्रबंध काव्य का जैसा घटनाचक्र चाहिए **पदमावत** का वैसा ही है।

डॉ. नगेंद्र द्वारा संपादित 'हिंदी साहित्य का इतिहास' में सूफी प्रेमाख्यानों के काव्य रूप के विवेचन के क्रम में इन प्रेमाख्यानों को मसनवी नहीं, कथा कहा गया है। इस विचार के प्रतिपादन में संस्कृत के काव्य शास्त्रीय सिद्धांतों का उदाहरण देते हुए सूफी कवियों की कुछ पंक्तियाँ भी दी गई हैं, जैसे -

प्रेम कथा एहि भांति बिचारहु। - जायसी
कथा जगत जेती कबि आई। - मंझन
जाकी बुद्धि होइ अधिकाई। आन कथा एक कहै बनई। - उसमान

इसी तरह कुछ ऐसे प्रेमाख्यान का भी उल्लेख किया गया है जिनके नाम में ही कथा शब्द का प्रयोग किया गया है, जैसे - **लखनसेन पदमावती कथा (दामोदर), सत्यवती कथा (ईश्वर दास), कथा रत्नावली, कथा कामलता, कथा कनकावती (जानकवि)** आदि। इस तरह यह सिद्ध किया गया है कि **"काव्य-रूप की दृष्टि से इन्हें परंपरागत कथा-काव्य के अंतर्गत ही लिया जाना उचित होगा।"** (हिंदी साहित्य का इतिहास, सं.डा.नगेन्द्र, पृ. 176)

उपर्युक्त मत से बिल्कुल असहमत नहीं हुआ जा सकता, क्योंकि हिंदी के सूफी कवि अगर अपने प्रेमाख्यान के लिए भारतीय प्रेम कथाओं या लोकगाथाओं से प्रभावित हो सकते हैं या उनके आधार पर काव्य ग्रंथ लिख सकते हैं तो वे उसके काव्य-रूप को भी अपना सकते हैं। चूंकि सूफी प्रेमाख्याओं में सर्गबद्धता नहीं है और उनमें घटनाओं के आधार पर शीर्षक दिए गए हैं, इसलिए इस तथ्य से इंकार नहीं किया जा सकता कि उन्होंने कम से कम प्रबंध कल्पना मसनवियों के आधार पर की है। जायसी का **पदमावत** भी मसनवी शैली में ही लिखा गया है।

यद्यपि **पदमावत** की कथा सुगठित है और उसमें प्रवाह भी है, किंतु पूर्वार्द्ध की कथा और उत्तरार्द्ध की कथा के संयोजन में अंतर है। पूर्वार्द्ध की कथा मन्द गति से चलती है और उत्तरार्द्ध की कथा अपेक्षाकृत तीव्रता से। लेकिन जायसी ने इन दोनों का सफल सामंजस्य किया है जिससे कथा में ठहराव नहीं आता।

इसी सिलसिले में विजयदेव नारायण साही के **पदमावत** की प्रबंध कल्पना संबंधी विचारों को जान लेना भी आवश्यक है। साही ने **पदमावत** के पूर्वार्द्ध को यूटोपिया, आलोक या सिंहल लोक कहा है जिसमें अतिप्राकृतिक घटनाएं हैं और उत्तरार्द्ध को इतिहास लोक, जो वस्तुत: इतिहास का वृत्तान्त नहीं, बल्कि इतिहास लोक निर्मित करता है। जायसी ने सत्य के नितान्त विभिन्न स्तरों पर, बिल्कुल भिन्न आयामों में कथा को फैलाने का जिम्मा ले कर बहुत बड़ा जोखिम उठाया है। इस तरह का जोड़ न तो पहले

मसनवियों में बैठाया गया था और न ही रामचरित मानस में। **पदमावत** एक सुगठित और एकतान संरचना का काव्य है।

साही जी के विचार तर्कसंगत हैं। निस्संदेह जायसी ने दो विभिन्न विरोधी प्रकृति की घटनाओं का सफलतापूर्वक सामंजस्य किया है। चूंकि **पदमावत** सूफी दर्शन को प्रतिपादित करने वाला ग्रंथ नहीं है, इसलिए जायसी ने रत्नसेन-पदमावती के विवाह के बाद भी कथा का अंत नहीं किया और उसे और आगे बढ़ाया। कथा को ट्रैजेडी बनाकर मानवीय, सांस्कृतिक मूल्यों को प्रतिष्ठापित करना ही जायसी का उद्देश्य था, इसलिए उन्होंने ग्रंथ के अंत का कहीं ऐसे बिंदु या घटना से नहीं किया है जिससे पदमावत एक आदर्शवादी काव्य बन जाता।

8.6 पदमावत में लोकतत्व

यह जान लेने के बाद कि **पदमावत** की कथा में लोकगाथा और इतिहास का सामंजस्य किया गया है, आपको **पदमावत** में चित्रित लोक जीवन और लोक तत्वों से परिचित होना आवश्यक है। इससे जायसी के लोक संबंधी दृष्टिकोण का पता चलता है।

अब तक आपको यह मालूम हो चुका है कि **पदमावत** की कथा राजन्य वर्ग की कथा है, अर्थात् इस प्रेम कहानी का नायक रतनसेन चित्तौड़गढ़ का राजा है, नागमती उसकी पटरानी है और पद्मावती प्रेमिका। गंधर्वसेन सिंहल द्वीप का राजा पदमावती का पिता है और अलाउद्दीन दिल्ली का बादशाह। ज़ाहिर है कि जब कथा राजन्य वर्ग की है तो परिवेश भी वही होगा, किंतु **पदमावत** में ऐसा नहीं है। एक लोक कवि बहुत देर तक इस परिवेश में रह ही नहीं सकता। उसे जब भी मौका मिलेगा, वह लोक जीवन की ओर भागेगा। अगर उसे ऐसा करने का मौका नहीं मिलता तो वह उसी परिवेश को लोकमय बनाने की कोशिश करता है। जायसी ने भी ऐसा ही किया है। उन्हें जहाँ कहीं भी अवसर मिला है, उन्होंने लोकजीवन की सुंदर छवियाँ प्रस्तुत की हैं। दूसरे शब्दों में कहा जाए तो जायसी ने विशिष्ट को ही 'सामान्य' बनाने की कोशिश की है। उन्होंने रत्नसेन को राजा से जोगी बना दिया है और लिखा है -

करब पिरीत कठिन है राजा

अर्थात् प्रेम मार्ग अत्यन्त कठिन है। कबीर के शब्दों में प्रेम के लिए सर्वप्रथम अहम् का त्याग करना पड़ता है और घनानंद के अनुसार प्रेम मार्ग अत्यन्त सीधा है, किंतु उस पर कुटिल और सयाने (जिनमें बांकपन है) नहीं चलते। राजा जब तक सत्ताभिमान से रहित नहीं हो जाता तब तक वह प्रेम कर ही नहीं सकता। जायसी अपनी इस उक्ति को चित्रित करने में सफल हुए और उन्होंने रत्नसेन को सत्ताच्युत करने के बाद ही उसके प्रेमपात्र से मिलवाया।

पदमावती की भी यही स्थिति है। पहले वह सुग्गे के उड़ जाने पर दुखी होती है और सखियों से कहती है कि जैसे भी हो उसे खोजो। और बहुत दिन बाद जब वह सुग्गा उससे मिलता है तो उसकी आंखें भर आती हैं और वह उसे गले से लगा लेती है। पदमावती की मुख्य चिंता अपने भावी पति को लेकर है। वह राजकुमारी है, देर-सबेर कोई न कोई राजकुमार मिल ही जाएगा, किंतु वह एक सामान्य स्त्री की तरह शिव मंदिर में मन्नत मांगती है कि अगर मेरे योग्य वर मिल जाएगा और मेरी इच्छा पूरी हो जाएगी तो मैं आपकी पूजा करूंगी। पदमावती के संग उसकी सखियाँ भी गयी हैं जो विभिन्न जातियों की हैं। नागमती वियोग खंड में तो नागमती का पूरा व्यक्तित्व ही एक सामान्य स्त्री का है।

पदमावत में लोककथाओं के तत्व भरे पड़े हैं। अत: इसमें यत्र-तत्र लोक जीवन का सुंदर चित्रण भी किया गया है। सिंहलद्वीप की पनिहारिन के चित्रण में जायसी ने पनघट का जो चित्र खींचा है वह अत्यन्त मनोहारी है। पनघट पर झुंड की झुंड पनिहारिन पानी भरने आ रही हैं। वे सुंदर हैं, पद्मिनियाँ हैं। वे जिसे नजर भर देख लेती हैं उस पर मानो तिरछे नैनों की कटार गिर पड़ती है। इन पनिहारिन के सिर पर सोने के घड़े हैं। इस प्रसंग में अत्युक्ति नहीं है। भारतीय लोकगीतों की सामान्य स्त्री भी सोने की थाली में अपने प्रिय को भोजन परोसती है और फूलों की सेज सजाती है। दरअसल इन सुंदरियों के रूप सौंदर्य के द्वारा जायसी ने पदमावती के अतीव रूप सौंदर्य को दिखाना चाहा है। जिस राजकुमारी की पनिहारिनें इतनी सुंदर हैं वह राजकुमारी कितनी सुंदर होगी-

माथे कनक गागरी आवहिं रूप अनूप।

जेहि के अस पनिहारी सो रानी केहि रूप?

इसी तरह जायसी ने पदमावती के विवाह के समय हल्दी लगाने की रस्म का भी सुंदर चित्रण किया है। हल्दी तो सामान्य लोग लगाते हैं, राजकुमारियों को तो कुंकुम-चंदन आदि के लेप लगाए जाते हैं। और इसके बाद विवाह का जो दृश्य है वह तो पूरी तरह भारतीय स्त्रियों की पूरी तस्वीर प्रस्तुत कर देता है। बारात आ रहीं है और वे अपनी अपनी अटारियों पर चढकर बारात और दूल्हे को देखती हैं। पदमावती भी 'जोगी' को दूल्हे के वेश में देखने के लिए सखियों के संग कोठे पर चढ जाती है और पूछती है कि इस बारात में वह जोगी कहाँ है? पदमावती के इस प्रश्न का उत्तर एक सखी चतुराई के साथ देती है -

जस रबि, देखु, उठै परभाता। उठा छत्र तस बीच बराता।
ओहि मांझ भा दूलह सोई। और बरात संग सब कोई।

अर्थात् उस बारात के बीच पहले सूर्य की तरह चमकदार धूप को देखों, फिर उसके बीच दूल्हे को देखो।

पदमावत का मानसरोदक खंड पूरी तरह लोक तत्वों से भरा हुआ है। यह पूरा खंड प्रश्नोत्तरी शैली में है जिसमें मायके की स्वच्छन्दता का वर्णन किया गया है तथा ससुराल में इस स्वच्छन्दता के छिन जाने की आशंका भी प्रकट की गई है। भारतीय लोक मानस का यह परिचित दृश्य है। सामान्य घरों की स्त्रियों को ससुराल में अनेक बंधनों और निषेधों के बीच रहना पड़ता है। इसीलिए जब कोई युवती ससुराल जाने लगती है तो उसकी आंखें बरसने लगती हैं और वह घर-परिवार के लोगों और सखियों के गले लगकर रोती है। मायके के इसी प्रेम का स्वाभाविक चित्रण पदमावती की इस मनोदशा में देखा जा सकता है-

गहबर नैन आए भरि आँसू। छांडब यह सिंघल कैलासू।
छांड़िउ नैहर, चलिउ बिछोई। एहि रे दिवसकहँ हँ हौ तब दोई।
छाड़िउं आपनि सखी सहेली। दूरि गवन तजि चलिउं अकेली।
नैहर आइ काह सुख देखा। जनु होइगा सपने कर लेखा।
मिलहु सखी हम तहँवा जाहीं। जहाँ आइ पुनि आउब नाहीं।
हम तुम मिलि एकै संग खेला। अंत बिछोह आनि गिउ मेला।।

बादल को युद्ध में जाना है। उसकी नवविवाहिता वधू उसकी ओर देख रही है और सोच रही है कि इस समय मुझे क्या करना चाहिए। अगर मैं लज्जावश चुप रहती हूँ तो प्रिय चले जाएंगे और कुछ कहती हूँ तो वे मुझे ढीठ समझेंगे-

रहौं लजाइ तो पिउ चलै, कहौं तो कह मोहिं ढीठ।

लेकिन अंतत: उसका असली रूप प्रकट होता है और वह बादल को उसके क्षात्र धर्म की याद दिलाते हुए कहती है कि तुम युद्ध का साहस बांधो और मैं सती का बाना बनाती हूँ। हम दोनों का मिलन जय और पराजय की स्थिति में ही संभव है। अगर तुम रण में पीठ दिखा कर आए तो भी मैं तुम्हें नहीं मिलूँगी।

बादल की स्त्री के इस प्रसंग में राजपूताने का पूरा लोक जीवन सामने आ जाता है।

जायसी ने बनिजारा खंड में सिंहलद्वीप के हाट का जो चित्रण किया है वह अत्यंत स्वाभाविक है। यह पूरी तरह से लोक जीवन से सम्पृक्त है।

पहले कहा जा चुका है कि जायसी ने **पदमावत** में जहाँ भी अवसर मिला है वहाँ लोक जीवन का सजीव चित्रण किया है और जहाँ इसका अवसर नहीं मिला है वहाँ भी लोकतत्वों का प्रयोग किया है। यह पूरी कथा राजन्यवर्ग और सामान्य वर्ग के द्वंद्व के आधार पर आगे बढ़ती है और अंतत: 'सामान्य' की ही जीत होती है। चाहे राजा रत्नसेन हो, चाहे रूपगर्विता नागमती- दोनों को सामान्य होना पड़ता है।

तात्पर्य यह है कि **पदमावत** में लोकजीवन का प्रत्यक्ष चित्रण कम हुआ है, किंतु जितना भी हुआ है वह विशद और स्वाभाविक है। यह स्वाभाविकता ही पदमावत को लोक से संपृक्त कर देती है।

पिछले प्रकरण में आपने **पदमावत** में चित्रित लोकजीवन के बारे में जानकारी प्राप्त की; दरअस्ल **पदमावत** की कथा का आधार लोक प्रचलित कथा और ऐतिहासिक कथा है। इसलिए **पदमावत** में सहज रूप से लोक जीवन, लोकविश्वास आदि आ गए हैं। **पदमावत** की रचना प्रक्रिया को देखते हुए यह नहीं कहा जा सकता है कि लोकजीवन से संबंधित ये प्रसंग ऊपर से थोपे गए हैं या बीच-बीच में जोड़े गए हैं। निस्संदेह इससे यह साबित होता है कि जायसी की लोक जीवन में गहरी पैठ थी।

भारतीय लोक मानस में कथा के कई रूप- किस्सा, कहानी, वृत्तांत-प्रचलित हैं। जायसी ने **पदमावत** में स्पष्ट रूप से लिखा है -

प्रेम कथा एहि भाँति बिचारहु।
बूझि लेउ जौ बूझै पारहु॥

दरअस्ल जायसी का उद्देश्य एक ऐसी प्रेम कथा लिखना था जिससे उच्चतर मानवीय मूल्यों की प्रतिष्ठा हो सके। जायसी इस सुंदर और मनोहारी सृष्टि की नश्वरता से परिचित थे। इस संसार में एक से बढ़कर एक शक्तिशाली राजा हुए, सुंदरियाँ हुईं, किंतु वे सभी काल के गाल में विलीन हो गए - रह गई तो बस एक कहानी। यह 'कहानी' ही वह जीवन मूल्य है जो अनुकरणीय और अमिट है। जायसी का यह प्रतिपाद्य लोक विश्वास के अनुकूल भी है और शास्त्रानुकूल भी। तात्पर्य यह है कि जायसी को भारतीय लोक जीवन का अच्छा ज्ञान था और वे लोकजीवन से दूर जाना भी नहीं चाहते। इसका सबसे बड़ा प्रमाण राजन्य वर्ग का सामान्यीकरण है। अगर जायसी ऐसा न करते तो **पदमावत** आभिजात्य वर्ग की कथा बन कर रह जाता है और वह शास्त्रीय हो जाता। अपनी कृति को शास्त्रीय होने से बचाने के लिए ही जायसी ने इतिहास पर कम, लोक प्रचलित कथा पर ज्यादा जोर दिया है। यही कारण है कि **पदमावत** की नागमती की सारी चिन्ताएँ एक अभावग्रस्त सामान्य भारतीय स्त्री की चिंताएँ बन गई हैं और पदमावती का दुख एक लाचार औरत का, जिसके प्राण तोते में बसते हैं। तोते के उड़ जाने पर पदमावती रोती है। पदमावती के इस दुख से जायसी ने लोक गीतों की प्रश्नोत्तरी शैली में अत्यन्त सजीव बना दिया है -

उड़ि वह सुअटा कहँ बसा खोजहु सखी सो बासु।
दहुँ है धरति कि सरग गा पवन न पावै तासु॥
जहाँ न राति न देवस है जहाँ न पौन न घानि
तेहि बन होइ सुअटा बसा को रे मिलावै आनि॥

जायसी बहुश्रुत थे। लेकिन उन्होंने सुव्यस्थित रूप से ज्योतिष, शास्त्र, इतिहास, भूगोल आदि का ज्ञान प्राप्त नहीं किया था। इन विषयों के संबंध में उनका ज्ञान लगभग जनश्रुतियों पर आधारित था। अवध में पदमावती की कथा लोक कथा के रूप में प्रचलित थी और उनसे पहले इस तरह की लोक कथाओं को लेकर असाइत और मुल्ला दाउद प्रेमाख्यान की रचना कर चुके थे, अत: जायसी ने भी लोक प्रचलित कथा को ऐतिहासिक कथा से जोड़ दिया और एक विशुद्ध प्रेमकथा को प्रेम और युद्ध की कथा बना दिया जो एक सफल त्रासदी बन गई। इस तरह जायसी ने एक प्रचलित लोक कथा का परिष्कार तो किया, किंतु उसे शास्त्रीय होने से बचा लिया।

यह सर्वविदित है कि जायसी का संबंध जायस से था। और यह भी भ्रांति जायसी एक मशहूर सूफी संत थे। एक सिद्ध फकीर के रूप में जायसी की ख्याति जायस के सुदूरवर्ती गाँवों तक थी, यह मान लेना ठीक नहीं है, क्योंकि मानव-मूल्यों का प्रवक्ता यह कवि बाह्याडंबरों और चमत्कारों में विश्वास नहीं कर सकता था। दरअस्ल जायसी की ख्याति का आधार उनका 'कबित्त' ही था, जिसमें मार्मिकता है। करुणा है, त्रासदी है जो निस्सार तथा नश्वर जीवन के प्रति सहज अनुराग की भावना जगाता है - भले ही यह अनुराग क्षण भर का ही क्यों न हो। क्षणभर का सच्चा अनुराग ही अमर है। इसीलिए जायसी ने लिखा है कि इसी सहज अनुराग और निर्मल स्वभाव के कारण रूपवंत भी उनके पाँव पड़ते थे और उनका मुँह देखते थे -

एक नैन जस दरपन औ तेहि निरमल भाउ।
सब रुपवंत पाँव गहि मुख जोवहिं कइ चाउ॥

स्पष्ट है कि जायसी कवि हैं और उनके जीवन में भी उनकी ख्याति का यही आधार था। जायसी बायीं आंख और बांया कान खो चुके थे, अर्थात् वे कुरूप थे, इसीलिए जो उन्हें देखता था वह हँसता था, किंतु जब वह उनका 'कबित्त' सुनता था तो रो पड़ता था -

मुहमद कबि जो प्रेम का ना तन रकत न माँसु।
जेइं मुख देखा तेइं हँसा सुना तौ आये आँसु॥

वास्तव में जायसी अपनी कविताई के कारण ख्याति प्राप्त कर चुके थे और उनकी ख्याति का आधार उनका लोक जीवन से गहरा लगाव ही था। डॉ. श्रीनिवास बत्रा ने ठीक ही लिखा है कि **जायसी भारत की ग्राम्य जनता के कवि हैं।** इसीलिए उन्होंने अवधी के ठेठ रूप को अपनाया है। नूर मुहम्मद की तरह जायसी ने हिंदी की अवधी बोली में इसलिए काव्य रचना नहीं की कि उसके द्वारा इस्लाम का प्रचार किया जाए और उसे घर-घर पहुँचा दिया जाए।

भारतीय समाज में लड़की को 'पराया धन' समझा जाता है। मायके में उसे जितनी स्वच्छंदता मिलती है उतनी ससुराल में नहीं। लड़कियाँ जानती हैं कि आज नहीं तो कल वे ब्याह दी जाएंगी और ससुराल जाते ही उनकी सारी स्वतंत्रता छिन जाएगी, सास-ननद ताने मारेंगी। ससुराल से मायके आना भी ससुराल वालों की मर्जी पर निर्भर करता है। इस लोकमत और कटु यथार्थ को जायसी ने कितने सुंदर ढंग से चित्रित किया है-

ए रानी! मन देखु बिचारी। एहि नैहर रहना दिन चारी॥
जौ लागि अहैपिता कर राजू। खेलि लेहु जो खेलहु आजू॥
पुनि सासुर हम गवनब काली। कित हम, कित यह सरवर पाली॥
कित आवन पुनि अपने हाथा। कित मिलि कै खेलब एक साथा॥

तात्पर्य यह है कि जायसी के **पदमावत** का रूप-विन्यास लोक कथात्मक है और उसकी कथा के आन्तरिक सूत्र लोकजीवन से जुड़े हुए हैं। यह महज इत्तेफाक नहीं कि जायसी इसी आन्तरिक लगाव के कारण लोक कवि के रूप में मशहूर हो गए हों। इसमें उनकी भाषा का भी कम महत्व नहीं है। जायसी के पूर्व के या उनके समकालीन सूफी कवियों की अस्थिर और खिचड़ी भाषा को देखकर यह सहज अनुमान लगाया जा सकता है कि जायसी की कविता का प्राण आन्तरिक रूप से लोक संगीत है तो बाह्य रूप से ठेठ अवधी की मिठास।

8.7 जायसी की भाषा

अन्त में जायसी की भाषा पर विचार कर लेना आवश्यक है, क्योंकि भाषा ही वह तत्व है जिसके द्वारा भावों और विचारों को अभिव्यक्त किया जाता है।

यह सर्वविदित है कि जायसी ने अपने **पदमावत** और अन्य काव्य ग्रंथों की रचना अवधी में की है। जायसी की अवधी तुलसीदास की अवधी से भिन्न है। जायसी की अवधी ठेठ अवधी है, जो लोक भाषा के बहुत निकट है जबकि तुलसीदास की अवधी परिष्कृत अवधी। जायसी ही नहीं, सभी सूफी कवियों की भाषा ललित, मधुर एवं सुबोध ठेठ अवधी है। डॉ. श्रीनिवास बत्रा के अनुसार **"ठेठ तथा तद्भव शब्द रूपों, लोक प्रचलित उक्तियों एवं मुहावरों आदि की दृष्टियों से सूफियों के प्रेमाख्यान लोकभाषा के महाकोश हैं।"** लेकिन हिंदी के असूफी प्रेमाख्यानों में अवधी, ब्रज और राजस्थानी आदि विभिन्न प्रकार की भाषाओं का प्रयोग हुआ है।

तात्पर्य यह है कि हिंदी के प्रेमाख्यानों में केवल अवधी का प्रयोग नहीं हुआ है। केवल उत्तरी भारत के हिंदी प्रेमाख्यानों में अवधी भाषा का प्रयोग हुआ है। दक्षिण के प्रेमाख्यानों की भाषा दक्खिनी है और इन पर अरबी-फारसी का गहरा प्रभाव है। 12वीं शताब्दी के प्रेमाख्यान **राउलवेल** (रोडा कवि) की भाषा पुरानी दक्षिण कोसली है। **उक्ति व्यक्ति प्रकरण** की भाषा भी पुरानी कोसली है। दरअस्ल भारत के सूफी कवियों ने प्राय: उसी भाषा को अपनी काव्य भाषा बनाया जहाँ वे रहते थे। पंजाबी के सूफी कवियों ने पंजाबी में और बंगाल के सूफी कवियों ने बंगला में प्रेमाख्यान लिखे। हिंदी के अधिकांश कवियों का संबंध चूंकि उत्तर भारत के अवधी भाषी क्षेत्र से था, इसलिए उन्होंने अवधी में ही अपने काव्यों की रचना की। अवधी भाषी क्षेत्र से सटे अन्य बोलियों के कवियों ने भी अवधी को ही अपनी काव्य भाषा बनाया, क्योंकि अवधी सूफी संप्रदाय की भाषा बन गयी थी। यही कारण है कि उसमान जैसे भोजपुरी

भाषी क्षेत्र के कवि ने भी अवधी को ही अपनी काव्य भाषा बनाया। हालांकि उनकी भाषा पर भोजपुरी का भी प्रभाव है।

जायसी ही नहीं, प्राय: सभी सूफी कवियों का लोक से गहरा संबंध था, इसीलिए उनकी भाषा भी लोकजीवन की भाषा है। परशुराम चतुर्वेदी ने जायसी की भाषा के बारे में लिखा है कि -''जायसी की सफलता उनकी सादी एवं आलंकरिक भाषा के व्यवहार में भी पायी जाती है। कहीं-कहीं उसमें यदि अनजान का अल्हड़पन आ जाता है तो अन्य एक मजी हुई लेखनी द्वारा निकले हुए प्रौढ़ उद्‌गारों की बहार भी देखने को मिलती है।''

जायसी की काव्य भाषा ठेठ अवधी अर्थात् जन सामान्य द्वारा बोली जाने वाली अवधी है, किंतु वह अवधी के व्याकरण के अनुकूल है। जायसी ने अवधी में कारक चिह्नों का सफल प्रयोग किया है। उन्होंने पुरानी अवधी के बहुत से अप्रचलित शब्दों का भी प्रयोग किया है। ऐसे शब्द **रामचरित मानस** में कम हैं। इस से स्पष्ट होता है कि बोलचाल की अवधी पर जायसी की कितनी जबर्दस्त पकड़ थी। कुछ अप्रचलित शब्द, जिनका प्रयोग **पदमावत** में हुआ है, जैसे अहक (लालसा), नौजि (ईश्वर), जहिया (जब), तीवइ (स्त्री), मोकाँ (मुझको), महूँ (मैं भी), अधिकै (और भी अधिक), शुक्ल जी के अनुसार साहित्यज्ञों को ग्राम्य लगेंगे। इसी तरह जायसी ने उच्चारण में संक्षेपीकरण की प्रवृत्ति को भी अपनाया है और 'कर' के स्थान पर केवल 'क' लिखा है। तुलसी ने भी इस प्रवृत्ति का अनुसरण किया है। यही नहीं, जायसी ने चरण के अंत में लघ्वंत पद को दीर्घांत कर दिया है। अत: जायसी की कविता में चरण के अंत में आए हुए पद के लिंग का निर्णय करते समय यह विचार कर लेना जरूरी होता है कि वह छंद की दृष्टि से लघ्वंत से दीर्घांत तो नहीं किया गया है, जैसे -

देखि चरित पदमावति हँसा।

उपर्युक्त पद में हँसा वास्तव में 'हँस' है जिसे छंद की दृष्टि से दीर्घांत कर दिया गया है।

लेकिन ठेठ अवधी को काव्य भाषा बनाने और उसके व्याकरणिक नियमों का पालन करने के बावजूद जायसी की भाषा में कहीं-कहीं कुछ दोष आ गए हैं। उन्होंने सर्वनामों, अव्ययों और विभक्तियों का लोप कर दिया है। इसलिए अर्थ लगाना कठिन हो जाता है। जायसी के संबंधवाचक सर्वनामों के लोप के बारे में रामचंद्र शुक्ल ने लिखा है कि इस मामले में जायसी संस्कृत कवि वाउनिंग से भी आगे निकल गए हैं। इसी तरह उन्होंने कुछ ऐसे शब्दों का प्रयोग किया है जिसमें अप्रयुक्तत्व दोष हैं, जैसे - बिसवास। दरअस्ल यह शब्द विश्वासघात के अर्थ में प्रयुक्त हुआ है। बिसवास, बिसासी या बिससापी का विश्वासघात और विश्वासघाती के अर्थ में प्रयोग घनानंद और दूलह कवि ने भी किया है। कहीं-कहीं जायसी ने फारसी के पूरे के पूरे वाक्य को ले लिया है, किंतु ऐसे उदाहरण बहुत कम हैं। और जहाँ ये सामासिक पद प्रयुक्त हुए हैं वे संस्कृत के अनुसार नहीं, विपरीत क्रम से हुए हैं। जैसे - **लीक पखान और किरिन रवि।**

जायसी ने बोलचाल की अवधी के अलावा बीच-बीच में नए-पुराने, पूरबी-पच्छिमी कई प्रकार के भाषा-रूपों को भी अपनाया है। इसलिए उनकी भाषा स्वच्छ, सुबोध और मधुर होते हुए भी अव्यवस्थित है। लेकिन न्यून पदत्व, विभक्तियों, संबंधवाचक सर्वनामों और अव्ययों के लोप के बावजूद जायसी की भाषा में जितनी मिठास और सादगी है उतनी किसी कवि में नहीं। रामचंद्र शुक्ल के अनुसार जायसी की भाषा का माधुर्य ''भाषा का माधुर्य है, संस्कृत का माधुर्य नहीं। वह संस्कृत की कोमलकांत पदावली पर अवलंबित नहीं। उसमें अवधी अपनी निज की स्वाभाविक मिठास लिए हुए है। जायसी की पहुँच अवध में प्रचलित लोक भाषा के भीतर बहते हुए माधुर्य स्रोत तक ही थी।''

इस प्रकार हम देखते हैं कि जायसी की भाषा वह 'बहता नीर' है जिसमें ताजगी है और जो जन-जन की भाषा है। जायसी चूँकि लोकजीवन से गहराई से जुड़े थे इसीलिए उनकी भाषा भी उसी भाषा का अनुसरण करती है जिसे अवध में लोग बोलते थे। इसीलिए जायसी की भाषा में अवधी के मुहावरे, कहावतें और लोकोक्तियाँ भी अनायास आ गई हैं जिससे उनकी भाषा अधिक व्यंजनात्मक हो गयी है।

8.8 सारांश

इस इकाई में आपने भारतीय और फ़ारसी काव्य परपरा का अध्ययन करते हुए हिंदी प्रेमाख्यान, **पदमावत** में प्रेम कथा, उसकी प्रबंधात्मकता में लोकतत्व तथा उसकी भाषा का परिचय प्राप्त किया।

भारतीय और फ़ारसी काव्य में प्रेम का विशिष्ट स्थान है। भारत में प्रेम को सर्वोच्च स्थान प्राप्त है। आध्यात्मिक क्षेत्र में मधुरा भक्ति इसका सर्वश्रेष्ठ उदाहरण है। जिस तरह फारसी लोककथाओं के आधार पर मसनवियाँ लिखी गयीं, उसी तरह हिंदी में भी प्रेम कथाओं और लोककथाओं के आधार पर प्रेमाख्यान लिखे गये। जायसी ने भी इतिहास और लोककथा का समन्वय कर **पदमावत** की रचना की।

आपने देखा कि हिंदी से पहले संस्कृत, पालि और अपभ्रंश में भी लोककथात्मक काव्यों की रचना की गयी है। हिंदी के पहले सूफ़ी कवि असाइन ने विक्रम-बैताल की कथा के आधार पर **हंसावली** की रचना की थी। **पदमावत** लोकगाथात्मक काव्य ग्रंथ है। अन्य सूफ़ी कवियों की तरह जायसी ने भी फ़ारसी सूफ़ी काव्य के कुछ आदर्शों को अपनाया है। लेकिन उनका रुझान ज्यादातर भारतीय है। उन्होंने नागमती वियोग खंड को लोककाव्य बारहमासा की तर्ज़ पर लिखा है। उन्होंने नागमती को रानी से सामान्य स्त्री, रत्नसेन को राजा से योगी और पदमावती को राजकुमारी से सामान्य युवती की तरह चित्रित किया है। अर्थात् जायसी ने राजन्य वर्ग का सामान्यीकरण किया है।

पदमावत लोकतत्वों से भरपूर है। उसकी आंतरिक संरचना किंवदंतियों और निजंधरी कथाओं जैसी है। **पदमावत** में भारतीय लोकजीवन, लोकविश्वास, लोकधारणाएं आदि समाहित हैं। पनघट हो या विवाह के समय हल्दी लगाने की रस्म, बारात देखने का दृश्य हो चाहे पदमावती-नागमती के सती होने का प्रसंग, पदमावती-सुए के संवाद, सभी घटनाएं लोकतत्वों से प्रेरित हैं।

जायसी ने **पदमावत** का रूप-विधान लोककथात्मक रखा है। रसात्मकता के संचार के लिए प्रबंधात्मकता का जैसा घटनाक्रम होना चाहिए, **पदमावत** का वैसा ही है। **पदमावत** की कथा दो विरोधी प्रकृत्ति की घटनाओं के बावजूद सुगठित है और उसमें प्रवाह भी है।

जायसी की भाषा अवधी है। उनकी कविता का प्राण आंतरिक रूप से लोकसंगीत है और बाह्य रूप से ठेठ अवधी का माधुर्य। उनकी भाषा जनसामान्य द्वारा बोली जाने वाली अवधी है और वह उसके व्याकरण के अनुकूल है। हालांकि जायसी की भाषा में कुछ अप्रयुक्तत्व दोष भी हैं, किंतु इसके बावजूद जायसी की भाषा में जितनी मिठास है वह दूसरे कवियों में नहीं है।

8.9 अभ्यास/प्रश्न

1. फ़ारसी सूफ़ी काव्य और हिंदी सूफ़ी काव्य में क्या अंतर है?
2. क्या पदमावत सूफ़ी काव्य है अथवा प्रेम काव्य?
3. लोकतत्व से आप क्या समझते है? पदमावत में वर्णित लोकतत्वों का परिचय दीजिए।
4. जायसी की भाषा का प्राण लोक संगीत है। जायसी की भाषा के संदर्भ में इसका विवेचन कीजिए।